रासो काव्य धारा एवं इसकी विशेषता

डॉ. कृष्ण कुमार पासवान
सहायक प्राध्यापक
हिंदी विभाग
राम चरित्र सिंह महाविद्यालय
मंझौल, बेगुसराय
सम्पर्क : ksoni.hindi@gmail.com

रासो का अर्थ विवादास्पद है। आचार्य शुक्ल इसका अर्थ 'रसायन' से निष्पन्न बताते हैं। आचार्य द्विवेदी इसका प्रयोग 'रस' के रूप में करते हैं। समग्रत: 'रासो' शब्द का प्रयोग 'रस' के लिए ही किया जाता है।

रासो काव्यधारा में तीन तरह के 'रासोग्रंथ' लिखे गये - वीरता प्रधान, श्रृंगार प्रधान एवं उपदेश प्रधान। चारण व भाट कवियों द्वारा रचित वीर काव्यों के अतिरिक्त श्रृंगार प्रधान व वीरता प्रधान रचनाएं भी आती हैं।

वीरता प्रधान रासो काव्य परंपरा में वीर रस अंगीरस है और संयोग श्रृंगार गौण रस है। इसमें चारण कवियों ने आश्रयदाताओं की प्रशंसा हेतु अतिशयोक्तिपूर्ण वीर काव्य लिखे हैं। उदाहरण के लिए पृथ्वीराज रासो - चंदबरदायी, हम्मीर रासो - शार्ड.धर, खुमान रासो -दलपति विजय आदि।

इन काव्यों में सामंती मूल्यों की स्पष्ट झलक दिखाई देती है। उदाहरणस्वरूप-

'एउ जिम्मु णग्गह गिउ, भउसिरि खग्ग न भग्गु।
तक्खा तुरीय ण माणिया, गोरी गले न लग्गु।।'

अर्थात् ऐसे व्यक्ति को धिक्कार है जिसने अपने सिर से तलवार को न तोड़ा हो, खतरनाक घोड़े को वश में न किया हो तथा गोरी को गले न लगाया हो। श्रृंगार परक रासो काव्यों में अंगीरस श्रृंगार है। श्रृंगार के संयोग व वियोग दोनों पक्षों का चित्रण है। अधिकांश काव्यों में वियोग श्रृंगार प्रबल है। अब्दुल रहमान का 'संदेश सासक' व नरपति नाल्ह का 'बीसलदेव रासो' इस परंपरा का उल्लेखनीय विरह काव्य है।

धार्मिक रासो काव्यों की रचना जैन कवियों द्वारा अपने धर्म व उपदेश का प्रचार करने के लिए की गई है। इसमें सूरि रचित 'उपदेश रसायन रास', शालिभद्र सूरि कृत 'भरतेश्वर बाहुबलि रास' उल्लेखनीय है।

(समाप्त)